AMOGHVARTA
ISSN : 2583-3189

मानव–प्रकृति संबंध, आरोग्य एवं सतत् विकास और गांधी

ORIGINAL ARTICLE

Author
डॉ. अमित रंजन सिंह
सहायक प्राध्यापक, सह विभागाध्यक्ष
स्नातकोत्तर गांधी विचार विभाग
तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय
भागलपुर, बिहार, भारत

शोध सार

आधुनिक सभ्यता में बढ़ते पर्यावरणीय संकट, जीवनशैली–जनित रोग, वैश्विक महामारियाँ तथा स्वास्थ्य असमानताएँ इस तथ्य को उजागर करती हैं कि वर्तमान विकास मॉडल मानव और प्रकृति के बीच संतुलन स्थापित करने में विफल रहा है। इस संदर्भ में गाँधी का दर्शन एक वैकल्पिक, नैतिक और दीर्घकालिक समाधान प्रस्तुत करता है, जिसमें स्वास्थ्य को केवल चिकित्सकीय विषय न मानकर जीवन–पद्धति और नैतिक अनुशासन का परिणाम माना गया है। शोध आलेख यह प्रतिपादित करता है कि गाँधी का आरोग्य चिंतन शरीर, मन, समाज और पर्यावरण के समन्वय पर आधारित एक समग्र दृष्टि है। ग्राम स्वच्छता, प्राकृतिक चिकित्सा, युक्ताहार, आत्मसंयम और स्थानीय संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग के माध्यम से गाँधी मानव प्रकृति सहअस्तित्व को सुदृढ़ करते हैं। उनका यह दृष्टिकोण आधुनिक सतत् विकास की अवधारणा विशेषतः स्वास्थ्य, पर्यावरणीय संतुलन और सामाजिक न्याय से गहरे रूप में संबद्ध है। वर्तमान वैश्विक स्वास्थ्य संकटों, विशेषतः महामारी, के संदर्भ में यह अध्ययन यह दर्शाता है कि गाँधी द्वारा प्रतिपादित स्वच्छता, स्वैच्छिक अलगाव (सूतक), सामुदायिक उत्तरदायित्व और सादगीपूर्ण जीवन आज भी प्रभावी स्वास्थ्य रणनीतियों के रूप में प्रासंगिक हैं। शोध आलेख निष्कर्षतः यह स्थापित करता है कि गाँधी का आरोग्य दर्शन सतत् विकास का एक स्वदेशी, मानवोन्मुख और पर्यावरण–संवेदनशील मॉडल प्रस्तुत करता है, जो न केवल वर्तमान संकटों के समाधान में सहायक है, बल्कि भविष्य की मानव सभ्यता के लिए भी एक नैतिक दिशासूचक प्रदान करता है।

मुख्य शब्द

मानव–प्रकृति संबंध, आरोग्य दर्शन, सतत् विकास, गाँधी विचार, प्राकृतिक चिकित्सा, युक्ताहार.

भूमिका

समकालीन विश्व एक ऐसे निर्णायक मोड़ पर खड़ा है, जहाँ अभूतपूर्व वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति के बावजूद मानव जीवन निरंतर स्वास्थ्य, पर्यावरण और अस्तित्वगत संकटों से घिरता जा रहा है। वैश्विक महामारियाँ, जीवनशैली–जनित रोग, जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण और प्राकृतिक संसाधनों का अनियंत्रित दोहन इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि मानव और प्रकृति के बीच संतुलन विकृत हो चुका है। आज स्वास्थ्य केवल व्यक्तिगत या चिकित्सकीय समस्या न रहकर सामाजिक, पर्यावरणीय और विकासात्मक प्रश्न भी बन गया है। इसी पृष्ठभूमि में मानवदृप्रकृति संबंध, आरोग्य और सतत् विकास का प्रश्न केंद्रीय महत्व प्राप्त करता है।

सतत् विकास की आधुनिक अवधारणा इस बात पर बल देती है कि वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति इस प्रकार हो कि भविष्य की पीढ़ियों की संभावनाएँ क्षीण न हों। किंतु व्यवहार में यह अवधारणा अक्सर आर्थिक वृद्धि और तकनीकी समाधानों तक सीमित रह जाती है, जिससे मानव स्वास्थ्य और प्रकृति दोनों उपेक्षित होते हैं। इस संदर्भ में महात्मा गाँधी का दर्शन एक वैकल्पिक और नैतिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। यद्यपि गाँधी ने "सतत् विकास" जैसे आधुनिक शब्दों का प्रयोग नहीं किया, फिर भी उनके विचारों में मानव प्रकृति संतुलन पर आधारित विकास की मूल भावना स्पष्ट रूप से विद्यमान है। गाँधी के लिए आरोग्य केवल रोगों की अनुपस्थिति नहीं, बल्कि ऐसा जीवन है जो प्रकृति के नियमों के अनुरूप, संयम, स्वच्छता और आत्मानुशासन पर आधारित हो। उनका स्वास्थ्य चिंतन शरीर, मन, समाज और पर्यावरण–चारों के समन्वय पर टिका हुआ है। ग्राम स्वच्छता, प्राकृतिक चिकित्सा, युक्ताहार, श्रमशील जीवन और स्थानीय संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग ये सभी तत्व गाँधी के आरोग्य दर्शन में मानव और प्रकृति के सहअस्तित्व को सुदृढ़ करते हैं। इस दृष्टि से गाँधी का स्वास्थ्य चिंतन आधुनिक "Holistic Health" और "Ecological Health" की अवधारणाओं का पूर्वगामी प्रतीत होता है।

गाँधी का विशेष आग्रह इस बात पर था कि अस्वस्थता का मूल कारण बाहरी रोगजनक नहीं, बल्कि मानव जीवन–पद्धति में निहित असंतुलन है। प्रकृति के शोषण, स्वच्छता की उपेक्षा और भोगवादी प्रवृत्तियों को वे सभ्यता के पतन का संकेत मानते थे इसलिए उनके लिए आरोग्य, नैतिकता और पर्यावरण संरक्षण परस्पर जुड़ी हुई अवधारणाएँ थीं। यह दृष्टिकोण आज के वैश्विक स्वास्थ्य संकटोंकृविशेषतः महामारियोंकृके संदर्भ में अत्यंत प्रासंगिक हो जाता है।

इस प्रकार प्रस्तुत शोध आलेख का उद्देश्य महात्मा गाँधी के स्वास्थ्य और आरोग्य संबंधी विचारों का विश्लेषण मानव प्रकृति संबंध और सतत् विकास के व्यापक वैचारिक ढ़ाँचे में करना है। यह अध्ययन यह प्रतिपादित करने का प्रयास करता है कि गाँधी का आरोग्य दर्शन केवल ऐतिहासिक महत्व का विषय नहीं, बल्कि समकालीन और भविष्यगत मानव सभ्यता के लिए एक नैतिक, पर्यावरण–संवेदनशील और दीर्घकालिक विकास मॉडल प्रस्तुत करता है।

मानव–प्रकृति संबंध, आरोग्य और सतत् विकास

ग्राम–आधारित आरोग्य मॉडल स्थानीय संसाधनों और सामुदायिक सहभागिता पर आधारित है। यह मॉडल सतत् विकास के विकेन्द्रीकृत स्वरूप को सुदृढ़ करता है। गांधी के ग्राम पुनर्निमाण योजना में ग्राम आरोग्य और स्वच्छता का महत्वपूर्ण स्थान है। "उनका मानना था कि जब तक गांवो की सफाई पर ध्यान नहीं दिया जाएगा तब तक वहां के लोगों का हृदय कभी स्वच्छ नहीं होगा और जनता का मन गांवों के घूरों जैसा ही रहेगा, इसलिए ग्रामोद्धार में ग्राम सफाई की उतनी ही महत्ता है, जितनी और बातों की।"[1] "बुद्धि और श्रम के अलगाव के कारण गांव के प्रति हम इतने लापरवाह हो गये है कि वह एक गुनाह ही माना जा सकता है, जिसका नतीजा यह हुआ कि देश में जहां सुन्दर सुहावने और मनोभावन बस्तियाँ होनी चाहिए वहाँ आज गांवों के नाम पर घूरों का ढेर देखने को मिलते हैं। गाँवों में प्रवेश करने पर खुशी नहीं होती बल्कि गाँव के बाहर और आसपास इतनी गंदगी होती है कि गांव में प्रवेश के समय अक्सर आँख मूँद कर और नाक पर कपड़ों से दबाकर जाना पड़ता है।"[2]

"गाँधी जी के अनुसार इसका कारण यह है कि हमने राष्ट्रीय या सामाजिक सफाई को न तो जरूरी गुण माना और न ही उसका विकास किया। यों ही रिवाज के कारण किसी तरह नहा धो भले लेते हैं, लेकिन जिस कुएं, तालाब या नदी में हम स्नान करते है, उसी को गंदा करने में हमें संकोच नहीं होता।"[3] "गांवों के तालाब में जहाँ बर्तन साफ किये जाते है, वहीं मवेशी पानी पीते हैं, नहाते है और पड़े रहते हैं, क्या बालक और क्या बड़े सब कोई तालाब में ही मैला साफ करते हैं, तालाब के किनारे की जमीन पर वे पखाना तो फिरते है, फिर वहीं पानी पीने और भोजन पकाने के काम भी आता है।"[4] "गाँव के लोग सफाई से संबंधित छोटी–छोटी बातों को भी बिल्कुल नहीं जानते हैं।"[5]

"गांव में जहाँ–तहाँ कूड़े–कर्कट, गोबर के ढेर और मलमूत्र पाये जाते है, इससे गंभीर बीमारी फैलने का डर बना रहता है इसलिए गाँधी जी स्वयंसेवक के बारे में कहते हैं कि स्वयं–सेवक रास्तों और गलियों की जाँच करेगा और जहाँ मल–मूत्र दिख पड़ेगा, उस जगह को साफ कर देगा, मैले को फावडे की मदद से टोकरी मे भर लेगा

और उस स्थान को सुखी मिट्टी से ढँक देगा। जहाँ पेशाब होगा, वहाँ की गीली मिट्टी को फावड़े से उसी टोकरी में भर लेगा और आस–पास तथा उस जगह पर दूसरी साफ और सुखी मिट्टी फैला देगा। अगर पास ही कूड़ा–कर्कट होगा तो उसे झाड़ू से इकट्ठा करके एक और ढेर बना देगा और मैले को ठिकाने पहुँचाने के बाद उसी टोकरी में कूड़ा–कर्कट भी भर कर ले जाएगा।"[6] "स्पष्ट है कि ग्राम सेवकों को अधिक ध्यान ग्रामों के आरोग्यता और स्वच्छता पर देना चाहिए।"[7] "क्योंकि गांधी के अनुसार ग्राम सेवकों का पहला धर्म, देहात वालों को सफाई से रहना सिखाना है, इसके लिए ग्राम–सेवक को गांव वालों के सामने प्रत्यक्ष उदाहरण रखना चाहिए। जो काम गांव वालों से कराने हैं उन्हें स्वयं करके बताएं, तभी गांव वाले उस ओर राजी होंगे।"[8]

आरोग्य के लिहाज से गांवों की हालत बड़ी दर्दनाक है। गांधी जी गांव को आरोग्य स्थान के रूप में देखना चाहते थे, "उनका मानना था कि मनुष्य को जो रोग होते है, उनमें से अधिकांश आरोग्य नियमों से उसकी अनभिज्ञता तथा उसकी उपेक्षा के परिणाम है।"[9] "ज्ञान के अभाव में किसी रोग द्वारा ग्रस्त हो जाने पर गांव वाले सादे घरेलू उपाय करने के बदले बहुत बार ओझों, पण्डों वगैरह को बुलाते है, अथवा जन्त्र–मंत्र, छुआ–छुत आदि के जाल में फँसकर बर्बाद होते है, इस सब में पैसा खर्च करते हैं और रोग घटने के बजाय बढ़ता ही जाता है।"[10] स्वच्छता गाँधी के लिए केवल व्यक्तिगत आदत नहीं, बल्कि सामाजिक और पर्यावरणीय उत्तरदायित्व है। स्वच्छ परिवेश को वे आरोग्य की प्रथम शर्त मानते हैं।

"आरोग्य का मतलब, तंदरुस्त शरीर में निर्विकार मन का विकास होना है। जिसका शरीर व्याधिरहित है, वह मनुष्य बगैर थकान के रोज दस–बारह मील चल सकता है, बगैर थकान के समान्य मेहनत मजदूरी कर सकता है, सामान्य भोजन पचा सकता है। जिसकी इंद्रिया और मन स्वस्थ है, ऐसे मनुष्य का शरीर तंदरूस्त कहा जा सकता है।"[11] "गाँधी जी के शब्दों में तंदरुस्ती के कायदे और आरोग्य शास्त्र के नियम बिल्कुल सरल और सादे है, और वे आसानी से सीखे जा सकते है, लेकिन उनपर अमल करना कठिन है। नीचे में कुछ नियम देता हूँ:

1. हमेशा शुद्ध विचार कीजिए और तमाम गंदे और निकम्मे विचारों को मन से निकाल दीजिए।
2. दिन–रात ताजी से ताजी हवा का सेवन कीजिए।
3. शरीर और मन के काम का तौल बनायें रखें, यानी दोनों को बेमेल न होने दें।
4. तनकर खड़े रहें, तनकर बैठें और अपने हर काम मे साफ–सुथरे रहें, और इन सब आदतों को अपनी आन्तरिक स्वस्थता का प्रतिबिम्ब बननें दें।
5. खाना इसलिए खाएं कि अपने जैसे अपने मानव बन्धुओं की सेवा के लिए ही जिया जा सके। भोग भोगने के लिए जीने और खाने का विचार छोड़ दीजिए। अतएव उतना ही खाइए जितने से आपका मन और आपका शरीर अच्छी हालत में रहे और ठीक से काम कर सके। आदमी जैसा खाना खाता है वैसा ही बन जाता है।
6. आप जो पानी पिएं, जो खाना खाएं और जिस हवा में सांस लें, वे सब बिल्कुल साफ होने चाहिए। आप सिर्फ अपनी निज की सफाई से संतोष न मानें, बल्कि हवा, पानी और खुराक की जितनी सफाई आप अपने लिए रखें, उतनी ही सफाई का शौक आप अपने आसपास के वातावरण में भी फैलाएं।"[12] स्पष्ट है कि गाँधी जी कुदरती उपचार को प्राथमिकता देते थे, उनके अनुसार जिस तरह, शरीर सफाई, घर सफाई और ग्राम सफाई हो तथा युक्ताहार और योग्य व्यायाम हो तो वहाँ कम से कम बीमारी होती है, और अगर चित्त शुद्धि भी हो तो कहा जा सकता है कि बीमारी असंभव हो जाती है।

स्थानीय और मौसमी भोजन पर गाँधी का बल पर्यावरणीय स्थिरता का स्वाभाविक आधार प्रस्तुत करता है। यह आहार प्रणाली ऊर्जा–खपत और प्रदूषण को न्यूनतम कर सतत् विकास को प्रोत्साहित करती है। आहार और श्रम के संतुलन को गाँधी स्वास्थ्य का मूलसूत्र मानते हैं। श्रम–आधारित जीवनशैली प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित कर शारीरिक और मानसिक आरोग्य को बढ़ाती है। कुदरती उपचार करना और भी सरल है। गाँधी जी के अनुसार कुदरती उपचार का आदर्श ही यह है कि जहाँ तक संभव हो, उसके साधन ऐसे होने चाहिए कि उपचार देहात में ही हो सके। जो साधन नहीं है वे पैदा किए जाने चाहिए। कुदरती उपचार में जीवन–परिवर्तन की बात

आती है। यह कोई वैध की दी हुई पुड़िया लेने की बात नहीं है, और न अस्पताल जाकर मुफ्त दवा लेना है, वह भिक्षुक नहीं बनता, वह अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाता है और अच्छा होने का उपाय खुद ही कर लेता है। वह अपने शरीर में से जहर निकाल कर ऐसा प्रयत्न करता है, जिससे दुबारा बीमार न पड़ सके। "वर्तमान चिकित्सा पद्धति से सहमति जताते हुए गांधी जी कहते हैं कि मेरी कुदरती इलाज तो सिर्फ गांववालों और गांवों के लिए ही है, इसलिए उसमें खुर्दबीन, एक्सरे वगैरह का कोई स्थान नहीं है और न ही कुदरती इलाज में कुनैन, एमिटिन, पेनीसिलिन आदि दवाओं की गुंजाइश है। उसमें अपनी सफाई, घर की सफाई, गांव की सफाई और स्वास्थ की रक्षा का पहला और पूरा–पूरा स्थान है। अस्पताल के लिए इसमे कोई स्थान नहीं है, क्योंकि प्रत्येक ग्रामवासी को अच्छा अस्पताल का ईलाज नसीब नहीं हो सकता, साथ ही यह खर्चीला और महंगा है, इसलिए गांव की अन्य जनता के लिए उपर्युक्त नहीं है, इससे केवल धनी व्यक्ति ही लाभ उठा सकते हैं। गांधी जी के अनुसार डॉक्टरी मदद लोगों को इसलिए दी जाती है ताकि लोग अधिक लाचार हो जाएं, अधिकांश मामले में एक तरफ से डॉक्टरी मदद ऊपर से थोपी जाती है और इसलिए वह व्यर्थ जाती है।"[13] क्योंकि रोग की ईलाज करने की अपेक्षा रोग को रोकना ही श्रेष्ठ उपाय है। "भारतीय धर्मशास्त्रों में भी आया है कि ''प्रक्षालाद्वि पंकस्य दूरादस्पर्शनं वरम्'' अर्थात् निस्सीम भोगविलास का मार्ग है, भोग का नियंत्रण और संविभाजन रोग को रोकने के उपाय हैं।"[14] "गाँधी जी का मानना है कि जीवन की कुंजी भगवान के हाथ में है, हम तो उसके नियमों का पता लगाकर पालन भर कर सकते हैं।"[15] "इसलिए वे रोगों के उपचार पर जोर देने के बजाय उनके रोक–थाम की दृष्टि से जनता में जागृति लाने पर जोर देते हैं। उनके शब्दों में स्वास्थ्य संबंधी नियमों की शिक्षा सभी स्कूल, कॉलेजों में अनिवार्य हो जाना चाहिए।"[16] ताकि हमारे गाँववाले को अपने स्वास्थ्य की देखभाल करने की शिक्षा मिल सके। उपभोगवादी जीवनशैली को गाँधी जी अस्वस्थ सभ्यता का लक्षण मानते हैं एवं संयम और सादगी को वे स्वास्थ्य और सतत् विकास की कुंजी मानते हैं।

"वे गरीबी को भी बीमारी का कारण मानते हैं, उनके शब्दों में– हमारी गिरी हुई और दर्दनाक तंदरूस्ती का कारण हमारी दरिद्रता है। अगर यह गरीबी दूर हो सके तो तंदरूस्ती अपने आप सुधर जाए।"[17] इसलिए वे स्थानीय साधन के आधार पर ईलाज की बात करते हैं, "उनका मानना है कि– पथ्य खुराक–युक्ताहार– इस उपचार का अनिवार्य अंग है। आज हमारे गांव हमारी ही तरह कंगाल हैं। गांव में साग–सब्जी, फल–दूध वगैरह पैदा करना कुदरती ईलाज का खारा अंग है। इसमें जो समय खर्च होता है वह व्यर्थ नहीं जाता बल्कि उससे सारे ग्रामवासियों को और अंत में सारे हिंदुस्तान को लाभ होता है।"[18] "मेरा यह विश्वास है कि मनुष्य को शायद ही दवा लेने की आवश्यकता रहती है। पथ्य तथा पानी, मिट्टी इत्यादि के घरेलू उपचारों से एक हजार में से नौ सौ निन्यानबे रोगी स्वस्थ हो सकते हैं।"[19] "पृथ्वी, पानी, आकाश, तेज, और वायु इन्हीं तत्वों से यह शरीर–रूपी पुतला बना है, और ये ही नैसर्गिक उपचारों के साधन हैं।"[20] इसके द्वारा विभिन्न रोगों का ईलाज संभव है, गाँधी जी ने इसका व्यापक प्रयोग किया जिसका वर्णन आरोग्य की कुंजी नामक पुस्तिका में विस्तारपूर्वक दी गई है। गाँधीय आरोग्य दर्शन विकास को केवल आर्थिक प्रगति नहीं मानता बल्कि वह विकास को नैतिक, सामाजिक और पारिस्थितिक संतुलन से जोड़ता है।

युक्ताहार, स्थानीय और मौसमी भोजन गाँधी के आरोग्य चिंतन का केंद्रीय तत्व है। यह सतत् उपभोग और पर्यावरणीय संरक्षण दोनों को बढ़ावा देता है। "अन्न मनुष्य का प्राण है, यह बात सच है कि हवा और पानी के बिना मनुष्य जीवित नहीं रह सकता, परन्तु जीवन को टिकाने वाली चीज़ तो भोजन ही है। मनुष्य जैसा आहार करता है, वैसा ही वह बनता है। आहार जितना तामस होगा, शरीर भी उतना ही तामस होगा।"[21] आहार तीन प्रकार का होता है– मांसाहार, शाकाहार और मिश्राहार। डॉक्टरी मत का झुकाव मुख्यतः मिश्राहार की ओर है, परंतु पश्चिम में डॉक्टरों का एक बड़ा समुदाय ऐसा है, जिसका यह दृढ़ मत है कि मनुष्य की शरीर की रचना को देखने से वह शाकाहारी ही लगता है, उसके दाँत, आमाशय इत्यादि उसे शाकाहारी सिद्ध करते हैं। गाँधीजी शाकाहार को अपनाने पर बल देते हैं, उन्होंने खुद लिखा है कि मैं शाकाहार का पक्षपाती हूँ, शाकाहार में फलों का समावेश होता हैं फलों में ताजे फल और सूखा मेवा अर्थात् बदाम पिस्ता, अखरोट, चिलगोचा आदि आ जाते हैं। जहाँ तक दूध का संबंध है, वे इसे शाकाहार नहीं मानते, क्योंकि उनके अनुसार जो गुण मांस में है, वे अधिकतर दूध में भी हैं। डॉक्टरी भाषा में वह प्राणीज आहार (Animal food) माना जाता है, परन्तु लौकिक भाषा में यह मांसाहार में नहीं गिना जाता। वे

कहते हैं मेरी दृष्टि से दूध और मांस लेने में दोष तो है ही। मांस के लिए हम पशु–पक्षियों का नाश करते है और माँ के दूध के सिवा दूसरा दूध पीने का हमें अधिकार नहीं है। नैतिक दोष के सिवा आरोग्य की दृष्टि से भी इनमें दोष है। दोनों में पशु के दोष आ ही जाते है, लेकिन वे स्वीकार करते हैं कि दूध और दूध से बनने वाले पदार्थ जैसे– मक्खन, दही, वगैरह के बिना मनुष्य शरीर पूरी तरह टिक नहीं सकता। मनुष्य शरीर को स्नायु बनाने वाले, गर्मी देने वाले, चर्बी बढ़ाने वाले, क्षार देने वाले और मल निकालने वाले द्रव्यों की आवश्यकता रहती है। स्नायु बनाने वाले द्रव्य दूध, मांस, दालों एवं सूखे मेवों से मिलते हैं। दूध और मांस में से दूध का स्थान अधिक ऊँचा है, क्योंकि यह मांस की अपेक्षा अधिक आसानी से पच जाते है। जब मांस नहीं पचता, तब भी दूध पच जाता है, अतः मांस नहीं खाने वालों को दूध से बहुत बड़ी मदद मिलती है। दूध का मुख्य गुण स्नायु बनाने वाले प्राणि पदार्थ की आवश्यकता पूरी करना है। मक्खन निकाल लेने पर भी यह गुण कायम रहता है, इस प्रकार मक्खन निकाला हुआ दूध निकम्मा नहीं होता, बल्कि वह अत्यंत कीमती पदार्थ है। दूध के सिवा दूसरे पदार्थ जिसकी, शरीर को आवश्यकता रहती है, उसमें, गेहूँ, बाजरा, ज्वार वगैरह अनाज रखे जा सकते हैं। गाँधी जी शरीर के पोषण के लिए गेहूँ बाजरा और चावल तीनों को एक साथ थोड़ी–थोड़ी मात्रा में खाना अनावश्यक मानते हैं, क्योंकि उनका मानना है कि शरीर के पोषण के लिए इस मिश्रण की आवश्यकता नहीं है। इससे आहार की मात्रा पर अंकुश नहीं रहता और आमाशय का काम अधिक बढ़ जाता है इसलिए एक समय में एक ही तरह का अनाज खाना ठीक है। गाँधी का शाकाहार दर्शन हिंसा–निरोध के साथ पर्यावरणीय संतुलन से भी जुड़ा हुआ है। पशु–आधारित उपभोग में कमी संसाधनों के संरक्षण और सार्वजनिक स्वास्थ्य दोनों के लिए लाभकारी है।

उनका मानना है कि अनाज की अच्छी तरह साफ करके हाथ की चक्की में पीस कर आटे को बिना छानें इस्तेमाल करना चाहिए। वे मील कुटे चावल आटे के जगह हाथ कुटा चावल, हाथ का पिसा आटा खाने पर जोर देते हुए कहते हैं कि ''हाथ का कुटा चावल, हाथ का पिसा आटा और गांव का बना गुड़ इन चीजों का प्रचार मैं केवल इसलिए कर रहा हूँ कि लोग मशीन की कुटी–पिसी बाजारू बीजें खा–खाकर अपने स्वास्थ्य खराब न करें, क्योंकि आज देखा जाय तो यही हो रहा है। मुझे खुशी है कि मील के चावल, आटे, और शक्कर के बारे में जो मेरी राय है, उनका समर्थन देश के ऊंचे–ऊंचे डॉक्टरों और वैज्ञानिकों ने किया है।"[22] "हाथ कुटे–पिसे खाना आर्थिक दृष्टि के साथ–साथ अन्य दृष्टियों से भी महत्त्वपूर्ण है क्योंकि गांवो के हाथ कुटे, हाथ पिसे चावल और आटे में तथा गुड़ मे विटामिनों और प्रोटिनों की मात्रा अधिक होती है, जबकि मिलों के चावल, आटा या चीनी में ये तत्व नहीं होते हैं।"[23] गाँधी के अनुसार असंतुलित आहार मानव प्रकृति संबंधों के विच्छेद का परिणाम है। प्रकृति–सम्मत भोजन इस संबंध की पुनर्स्थापना में सहायक होता है।

गांव वालों के भोजन में विटामीनों की कमी रहती है। बहुत से विटामिन हरी पत्तियों से प्राप्त हो सकते हैं। एक अंग्रेज डॉक्टर के साथ चर्चा का उदाहरण देते हुए गाँधी जी ने लिखा है कि– ''अंग्रेज डाक्टर ने मुझे दिल्ली में कहा था कि हरी पत्तियों–भाजियों का ठीक–ठीक उपयोग खुराक संबंधी रूढ़ विचारों में क्रांति पैदा कर देगा और आज दूध से जो पोषण मिलता है उसका बहुत सा हिस्सा हरी पत्ती–भाजियों से मिल सकेगा।''[24] "गांव वाले हरी पत्तियां या भाजियां सिर्फ शहरों में खाई जाने वाली चीज समझते हैं। हिन्दुस्तान के बहुत से हिस्सों में गांव वाले दाल, चावल या रोटी के साथ बहुत सी मिर्च जो शरीर को नुकसान करती है उसपर गुजर करते हैं।"[25] ग्रामवासी चाहें तो काफी मात्रा में साग–भाजी पैदा कर सकते हैं। ताजी साग–भाजी में पतों वाले जो भी भाजी मिले हर रोज़ लेनी चहिए। फलों के मौसम में जो भी फल मिल सके उन्हें लेना चहिए। आम के मौसम में आम, जामुन के मौसम में जामुन, इसी तरह अमरूद, पपीता, संतरा, अंगुर मीठे नींबू (शरबती या स्वीट लाइम) मौसम्बी वगैरह फलों का ठीक–ठीक उपयोग करना चाहिए। केला एक अच्छा फल है केला, दूध और भाजी एक सम्पूर्ण आहार है। गाँधी के आरोग्य चिंतन में अल्प–भोजन और संयमित उपभोग केंद्रीय स्थान रखते हैं। यह दृष्टि आज के "सतत् उपभोग" सिद्धांत का नैतिक आधार निर्मित करती है।

सब प्रकार का आहार औषधि के रूप में खाना चाहिए, स्वाद के खातिर हरगिज नहीं। भोजन जीवन के लिये मुख्य वस्तु है। भोजन में किसी तरह का संयम न रखना, मनमाना खाना–पीना अनुचित है। स्थानीय और मौसमी

भोजन पर गाँधी का बल पर्यावरणीय स्थिरता का स्वाभाविक आधार प्रस्तुत करता है। यह आहार प्रणाली ऊर्जा–खपत और प्रदूषण को न्यूनतम कर सतत् विकास को प्रोत्साहित करती है।

निष्कर्ष

यह अध्ययन यह प्रतिपादित करता है कि महात्मा गाँधी का आरोग्य दर्शन मानव–प्रकृति संबंधों पर आधारित सतत् विकास की एक समग्र, नैतिक और व्यावहारिक रूपरेखा प्रस्तुत करता है। आधुनिक सभ्यता में बढ़ते स्वास्थ्य संकट, पर्यावरणीय असंतुलन और वैश्विक महामारियाँ इस तथ्य की पुष्टि करती हैं कि विकास का वर्तमान मॉडल मानव और प्रकृति के सहअस्तित्व को सुरक्षित रखने में असफल रहा है। इस संदर्भ में गाँधी का आरोग्य चिंतन जो स्वच्छता, आत्मसंयम, प्राकृतिक चिकित्सा और ग्राम–आधारित जीवन पर केंद्रित है सतत् विकास की अवधारणा को मानवीय और पर्यावरण–संवेदनशील आधार प्रदान करता है। नीति–स्तर पर यह अध्ययन संकेत करता है कि सार्वजनिक स्वास्थ्य और विकास योजनाओं में गाँधीय दृष्टि का समावेश आवश्यक है। ग्राम स्वच्छता, निवारक स्वास्थ्य, स्थानीय संसाधनों का उपयोग और समुदाय–आधारित स्वास्थ्य व्यवस्था जैसे तत्व न केवल स्वास्थ्य लागत को कम कर सकते हैं, बल्कि पर्यावरणीय संरक्षण और सामाजिक न्याय को भी सुदृढ़ कर सकते हैं। महामारी प्रबंधन के संदर्भ में गाँधी की स्वैच्छिक अलगाव, आत्मानुशासन और नैतिक उत्तरदायित्व पर आधारित रणनीतियाँ आधुनिक स्वास्थ्य नीतियों के लिए सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील और दीर्घकालिक समाधान प्रस्तुत करती हैं। इस अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि सतत् विकास की नीतियाँ यदि केवल आर्थिक वृद्धि और तकनीकी हस्तक्षेप तक सीमित रहीं, तो वे स्वास्थ्य और पर्यावरण दोनों के लिए अपर्याप्त सिद्ध होंगी। गाँधी का दर्शन विकास को नैतिक संयम और प्रकृति–सम्मत जीवन–पद्धति से जोड़ता है, जिससे नीति–निर्माण अधिक समावेशी, न्यायपूर्ण और स्थायी बन सकता है। अतः सार्वजनिक स्वास्थ्य, पर्यावरण नीति और ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में गाँधीय आरोग्य दृष्टि को एक वैचारिक आधार के रूप में अपनाया जाना आवश्यक है। भविष्य के अनुसंधान की दिशा में यह अध्ययन अनेक संभावनाएँ प्रस्तुत करता है। प्रथम, गाँधीय आरोग्य दर्शन और आधुनिक सतत् विकास लक्ष्यों (SDGs) के बीच तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। द्वितीय, ग्राम–आधारित स्वास्थ्य मॉडल की प्रभावशीलता का अनुभवजन्य मूल्यांकन समकालीन संदर्भ में किया जाना अपेक्षित है। तृतीय, महामारी प्रबंधन में गाँधी की नैतिक और सांस्कृतिक रणनीतियों की भूमिका पर अंतःविषयक शोध की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, मानसिक स्वास्थ्य, पर्यावरणीय नैतिकता और जीवनशैली–जनित रोगों के संदर्भ में गाँधीय दृष्टि का विश्लेषण भविष्य के शोध के लिए सार्थक आधार प्रदान कर सकता है।

अंततः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि मानव प्रकृति संबंध, आरोग्य और सतत् विकास के संदर्भ में गाँधी का दर्शन न केवल वैचारिक रूप से प्रासंगिक है, बल्कि नीति–निर्माण और भविष्य के अनुसंधान के लिए भी एक सशक्त मार्गदर्शक सिद्ध हो सकता है। गाँधीय आरोग्य दृष्टि का पुनर्पाठ और व्यावहारिक अनुप्रयोग ही एक स्वस्थ मानव समाज और संतुलित प्रकृति के सह–अस्तित्व की दिशा में निर्णायक कदम हो सकता है।

संदर्भ सूची

1. सं. गा. वांग्मय खंड – 87, पृ. 246।
2. उपरिवत् खंड– 75, पृ. 169।
3. उपरिवत् खंड– 75, पृ. 169.
4. उपरिवत् खंड– 41, पृ. 335, एवं नवजीवन 31.5.1925 गुजराती से।
5. उपरिवत् खंड– 33, पृ. 85, एवं नवजीवन 27.2.1927.
6. उपरिवत् खंड– 41, पृ. 491, एवं नवजीवन 22.9.1929 गुजराती से।
7. उपरिवत् खंड– 60, पृ. 361, एवं हरिजन 22.6.1935.

8. उपरिवत् खंड– 41, पृ. 491, एवं नवजीवन 22.9.1929 गुजराती।
9. उपरिवत् खंड– 75, पृ. 171.
10. उपरिवत् खंड– 41, पृ. 335, एवं नवजीवन 18.8.1929 गुजराती।
11. गाँधी जी, आरोग्य की कुंजी, 1958, पृ. 1.
12. गाँधी जी, रचनात्मक कार्यक्रम, 1959, पृ. 36.
13. सं. गाँधी वांग्मय, खंड– 60, पृ. 355, एवं हरिजन–29.3.1935.
14. पटेल, झबेरभाई (1962) *ग्राम संस्कृति का अगला चरण,* नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, पृ.– 24.
15. सं. गां. वांग्मय, खंड– 73, पृ– 297.
16. उपरिवत् खंड– 90, पृ. 261.
17. उपरिवत् खंड– 41, पृ.–335, एवं नवजीवन, 18.8.1929 गुजराती से।
18. हरिजन सेवक, 2.6.1946, पृ. 165.
19. गाँधी जी, आत्मकथा, पृ. 165.
20. गाँधी जी, आरोग्य की कुंजी, 1958, पृ. 39.
21. हरिजन, 5.8.1938.
22. सं. गां. वांग्मय, खंड– 60 पृ. 80 एवं हरिजन 25.1.1935 तथा हिन्दुस्तान टाईम्स, 11.1.1935 अंग्रेजी से।
23. उपरिवत् खंड– 60, पृ. 81 एवं हरिजन 25.1 1935 तथा हिन्दुस्तान टाईम्स,11.1.1935 अंग्रेजी से।
24. सं. गां. वांग्मय, खंड– 60, पृ. 251, एवं हरिजन, 15.2.1935 अंग्रेजी से।
25. उपरिवत् खंड– 60, पृ. 251, एवं हरिजन 15.2.1935 अंग्रेजी से।

––==00==––